SWAR SINDHU: NATIONAL PEER-REVIEWED/REFEREED JOURNAL OF MUSIC
A UGC CARE LISTED JOURNAL
ISSN 2320-7175 (O) | VOLUME 12, ISSUE 03, DECEMBER, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org

विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य - एक समीक्षा

DR. DIWAKAR KASHYAP

Assistant Professor, Indira Kala Sangeet Vishvavidayalaya, Khairagarh

सार

शिक्षा एक बहुआयामी शब्द है। इसके सार्थक परिणामों के लिए एक रूपरेखा की जरूरत होती है। उसे उद्देश्य कहते है। तत्कालीन समय में संगीत शिक्षा के आदर्श रूपों व व्यवहारिक रूपों की चर्चा तो होती हैं , परन्तु चिंतन और मनन की कमी दिखाई पड़ती है। विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा एक माध्यम है जो शिक्षा के व्यवहारिक और आदर्श रूपों को जोड़ सकता है।

संकेताक्षर *- गुरू-शिष्य , शिक्षण प्रणाली , स्वतंत्रता , उद्देश्य।*

भूमिका

उद्देश्य का सीधा संबंध शिक्षा के व्यवहारिक कार्यक्रम से होता है जो समस्त शिक्षा प्रक्रिया में निर्णय लेने व कार्यशीलता में सहायक होते हैं। उद्देश्य अस्पष्ट होने से शिक्षा प्रक्रिया में पाठ्यक्रम तथा शिक्षण विधि संबंधी निर्णय लेना तदनुरूप मूल्यांकन करना कठिन होता है, अतः शिक्षा के प्रत्येक स्तर के लिए उद्देश्य निर्धारित करना सर्वोपरि आवश्यक हो जाता है। यद्यपि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षा के उद्देश्यों में लगभग समानता होती है, तथापि विशिष्ट स्तर की आवश्यकता व अपेक्षाओं के कारण कुछ भिन्नता आ जाती है। अतः प्रत्येक स्तर के लिए शिक्षा के उद्देश्य भिन्न हो जाते हैं। संगीत शिक्षा के व्यापक उद्देश्य, सौन्दर्यानुभूति तथा आनंदानुभूति है, जिनकी प्राप्ति की ओर सम्पूर्ण शिक्षा क्रियारत् रहती है। प्रत्येक स्तर पर किये गये प्रयत्न इसको विकसित करने में योगदान देते हैं और अंततः इसकी प्राप्ति में सहायक होते हैं। विभिन्न स्तरों जैसे प्राथमिक, माध्यमिक, स्नातक तथा स्नात्कोत्तर स्तर पर अलग-अलग विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किये जाने के उपरांत अपनी शैक्षिक कार्यक्रम को छोटे-छोटे समयबद्ध लक्ष्यों में बांट लेते हैं। उद्देश्यों का निर्धारण विद्यार्थी, शिक्षक तथा शिक्षण व्यवस्था के संदर्भ में किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों की व्यक्तिक, सांगीतिक क्षमताओं और उनकी विशिष्ट योग्यताओं का विकास विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। प्रारंभ एवं विकास स्वाधीनता उपरांत संगीत संस्थानों का व्यापक विकास हुआ शास्त्रीय संगीत के प्रचार-प्रचार के मार्ग खुले। इन संगीत संस्थानों का परिचय प्राप्त करने से पूर्व यह आवश्यक प्रतीत होता है कि हम भारत वर्ष में संगीत शिक्षण संस्थाओं से संबंधित प्राचीन इतिहास पर एक दृष्टि डालें, क्योंकि आधुनिक युग में प्रचलित, संगीत की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली हमारे देश की प्रचलित प्राचीन शाल्य शिक्षण व्यवस्था की ही देन है। यह गुरु-शिष्य परम्परा पर आधारित थी, जिसका एक भव्य इतिहास है। भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही संगीत के शिक्षण हेतु विभिन्न संगीत शालाओं, अर्थात् शाल्य शिक्षण व्यवस्था का अत्यधिक प्रचलन देखने को मिलता है।

"संगीत शिक्षण की गुरु-शिक्षण-प्रणाली इस देश में अत्यंत प्राचीन काल से रही है। जिस प्रकार, समस्त साहित्य, दर्शन, वेद आदि श्लोकों के रूप में मुखस्थ किए जाते थे, उसी प्रकार, संगीत जो मुख्यतः मौखिक एवं प्रदर्शनात्मक कला है, गुरूमुख से ही सीख कर आत्मसात् की जाती थी। संगीत का संस्थागत्, सामुहिक शिक्षण 20वीं शताब्दी की देन है। इसके पूर्व यह प्रणाली इस रूप में लगभग नहीं थी। शिष्य को गुरु के आश्रम में रहकर, अथवा वहाँ जाकर सीखना पड़ता था। सुपात्र सिद्ध होने पर गुरु की शिष्यता प्राप्त होती थी। गुरु प्रसन्न होने पर "सीना-बसीना" तालीम देते थे। श्रद्धान्वत शिष्य गुरु की सारी विशेषताओं एवं कला की खूबियों को यथा-शक्ति बटोरता था। शिष्य की सफलता गुरु के प्रतिरुप बन जानें में ही मानी जाती थी।1" "यद्यपि आधुनिक-युग में, संगीत के संस्थागत शिक्षण की व्यवस्था पाश्चात्य शिक्षा-प्रणाली के प्रभाव में बहुत विकसित हुई परन्तु, इस विषय के शालेय-शिक्षण का प्रचलन, प्राचीन एवं मध्ययुग में भी यत्र-तत्र देखने में आता है।2" "अर्थशास्त्र के साक्ष्य से स्पष्ट है कि- नाट्य तथा संगीतकला को राज्याश्रय प्राप्त था। गणिका, दासी तथा नटों को गीत, वाद्य, नृत्य, नाट्य, नृत्त, वैशिक आदि कलाओं की शिक्षा देने वाले व्यक्तियों को शासन के ओर से द्रव्य दिया जाता था। इनके पाठ्यक्रम में वैशिकी कला के अतिरिक्त गीत, वाद्य, नृत्त, नाट्य, वीणा, वेणु तथा मृदंग की शिक्षा सम्मिलित थी। ललितकला की इन संस्थाओं का प्रवत्र्तन राज्य की ओर

से होता था। इस संस्था के आचार्यों तथा अन्य विद्यावन्तों को उनकी योग्यतानुसार वेतन राज्य की ओर से दिया जाता था। ऐसी संस्थाओं में गणिकाओं के अतिरिक्त उनके वंशज तथा संगीत का व्यवसाय करने के इच्छुक अन्य शिक्षार्थियों को प्रवेश दिया जाता था।3"

"संगीत शिक्षा का प्रबंध संगीतशालाओं के द्वारा किया जाता था। इन शालाओं का संचालन समस्त नगर की ओर से अथवा विभिन्न व्यवसायिक गणों की ओर से होता था। गणिकादि वर्गों को संगीत की उच्च शिक्षा दी जाती थी। इन शालाओं का पाठ्यक्रम समाप्त करने पर गणिका तथा अन्य विद्यार्थी न केवल जीविकार्जन के लिए योग्य बन जाते, अपितु सुसंस्कृत नागरिक कहलाने के लिए पात्र बन जाते थे। संगीतशालाओ के अतिरिक्त विट, पीठमर्द आदि व्यक्ति निजी रूप से संगीतध्यापन का कार्य करते थे। वात्स्यायन ने विट, विदूषक, तथा पीठमर्द का विवरण करते हुए बतलाया है कि पीठमर्द ललितकलाओं में निपुण व्यक्ति हुआ करते थे, तथा दूर-दूर से आकर गणिकाओं को संगीतादि कलाओं की शिक्षा देकर जीविका साधन करते थे।4"

"शुद्रक के समय नाटक के आरम्भ में संगीत गाान की परिपाटी प्रचलित थी। संगीतशाला के अन्तर्गत संगीत तथा नाट्य दोनों कलाओं की शिक्षा प्रदान की जाती थी। ऐसी संगीत शालाएँ किन्हीं श्रीमान् रसिकों की छत्रछाया में परिवर्धित होती थी तथा इनमें विद्यादानार्थ सुयोग्य कलाचार्यों को नियुक्त किया जाता था, यह बात सन्देहास्पद नहीं। मृच्छकटिक का सूत्रधार जब अपनी संगीतशाला को शून्य देखता है, तब अपने दरिद्रय का स्मरण कर लेता है।5"

"बाण के हर्षचरित में राजभवन के अंतर्गत संगीत गृह का उल्लेख है जो राजप्रसादों का आवश्यक अंग रहा है। राजप्रसादों की जिस रचना का उल्लेख वाण में है, उसकी परम्परा पूर्वकालीन साहित्य से लेकर उत्तरवर्ती साहित्य में बराबर पाई जाती है, जिसमें संगीत शाला अनिवार्य स्थान रहा है।6" "बौद्धकाल में तक्षशिला विद्यादान का प्रमुख केन्द्र था, जिसमें वैदिक विद्यालय अष्टादश विद्यालय, शिल्प-विज्ञान विद्यालय आदि विभिन्न अध्ययन-विभागों में पाँच-पाँच सौ विद्यार्थी शिक्षा पाते थे।7"

"वाराणसी, बौद्धकाल का एक दसू रा विद्याकेन्द्र था, जिसमें संगीताध्यापन का एक स्वतन्त्र विभाग था। नालन्दा, विक्रमशिला, तदन्तपुरी जैसी अन्य विश्वविद्यालयों में भी गांधर्व का स्वतन्त्र निकाय अथवा फैकल्टी थी तथा इसके अधिष्ठाता के रूप में भारत विख्यात् संगीतज्ञ की नियुक्ति हुआ करती थी।8" "गायक-वादक एवं नृत्य के सभी प्रमुख घराने आज भी विद्यमान हैं। आज भी उनमें से प्रतिभा सम्पन्न कलाकार उत्पन्न हो रहे हैं तथा जनमानस आज भी इस प्रकार के खानदानी संगीतज्ञों को सिर आँखों पर लेता है। परन्तु आज संगीत शिक्षण केवल घरानों में ही सीमित नहीं रहा। आज संगीत को मध्यम एवं साधारण वर्ग का सद्गृहस्थ भी सीखना चाहता है। अधिकाधिक लोग अपने सीमित साधनों में उसका लाभ उठाना चाहते हैं। यह सुविधा उन्हें संगीत के प्रचार-प्रसार हेतु स्थापित संस्थाओं में प्राप्त होती है। ये संगीत संस्थाएँ अपने-अपने ढंग से संगीत की सेवा कर रही हैं और इससे 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' का हमारा उद्देश्य पूर्ण हो रहा है।9"

"मानसिहं तोमर काल के उपरान्त आधुनिक काल के पूर्व तक अन्य किसी राजा या महाराजा द्वारा संगीत विद्यालय स्थापित कराये जाने का प्रमाणिक उल्लेख हमें प्राप्त नहीं होता। इस संबंध के छुटपुट प्रयास 19वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुए। अंग्रेज़ी-शासन की स्थापना के साथ ही संपूर्ण शिक्षा-प्रणाली का पाश्चात्यीकरण प्रारंभ हुआ। मानविकीय एवं विज्ञान के साथ-साथ ललित कलाओं एवं संगीत की शिक्षा भी गुरुकुल प्रणाली के स्थान पर संस्थाओं या विद्यालयों में सामूहिक रीति से प्रारंभ हुई। जनसामान्य में अधिकतम प्रचार-प्रसार, शिक्षण में नियमबद्धता एवं स्तरीकरण के उद्देश्य से संगीत विषय की संस्थागत् सामूहिक शिक्षण विधि अपनाई जाना युग की आवश्यकता थी। इसके द्वारा ही अधिकतम व्यक्ति लाभान्वित हो सकते थे। पाश्चात्य देशों में काफी पहले से ही इस विधि का व्यवहार हो रहा था तथा वहाँ संगीत के क्षेत्रों में भी इसका प्रचलन था। अपने देश में संगीत को "घरानों" के संकुचित दायरे से मुक्त कराकर जनसामान्य को सुलभ कराने के प्रयास 19 वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में

यत्र-तत्र प्रारंभ हो गए थे। उन्नीसवीं शताब्दी के पूवार्द्ध में तानसेन के वंशज बहादुर ख़ाँ, जो प्रसिद्ध धुरवपदिया थे, विष्णुपुर (बंगाल) में जाकर बसे तथा वहाँ संगीत का विद्यालय प्रारंभ, किया जिनमें गदाधर चक्रवर्ती, रामशंकर भट्टाचार्य, निताई नज़ीर, वृन्दावन नज़ीर इत्यादि प्रसिद्ध गाायक तैयार हुए। रामशंकर भट्टाचार्य के शिष्यों में क्षेत्र मोहन गोस्वामी ने सन् 1872 में कलकत्ता में एक संगीत विद्यालय की स्थापना की

तथा संगीत को जन सामान्य में प्रचलित करने का स्तुत्य प्रयास किया। क्षेत्रमोहन गोस्वामी ने संगीत की एक पुस्तक लिखी तथा स्वर-लिपी का भी निर्माण किया। पं. भास्कर राव बखले द्वारा पूना में 1874 में "भारत गाायन समाज" नामक संस्था की स्थापना हुई थी। बम्बई में पारसियांे द्वारा 1890 के पूर्व ही "गायनोत्तेजक मंडल" की स्थापना की जा चुकी थी। सन् 1880 के कुछ पहिले जामनगर में पं. आदित्यराम ने संगीत के सामूहिक शिक्षण का प्रयास किया था। बंगाल में छुटपुट प्रयास किए जा रहे थे। इस दिशा में निश्चित प्रयत्न सन् 1886 में बड़ौदा में हुआ जहाँ श्रीमंत सयाजीराव गायकवाड़ द्वारा संगीत विद्यालय प्रारंभ करवाया गया। यही विद्यालय बाद में "बड़ौदा स्टेट म्यूज़िक" स्कूल कहलाया। स्व.पं.विष्णु दिगंबर पलुस्करजी द्वारा गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना सन् 1901 में लाहौर में हुई। सन् 1906 में डॉ. एनीबेसन्ट द्वारा थियोसोफिकल विद्यालय की स्थापना बनारस में की गई, जिसमें संगीत को शिक्षा का एक विषय बनाया गया।

स्व.पं.वि.ना.भातखण्डे जी द्वारा 1 जनवरी 1918 में ग्वालियर में, 1920 में बड़ौदा में तथा सन् 1926 में लखनऊ में संगीत विद्यालयों को प्रारंभ किया गया। लगभग इसी समय इलाहाबाद में "प्रयाग संगीत समिति" की स्थापना हुई। सन् 1950 में वाराणसी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संगीत विभाग की स्थापना के परिणामस्वरुप देश के अन्य विश्वविद्यालयों में भी संगीत विभागों को प्रारंभ करने की होड़ सी लग गई। आज, संगीत की एकमेव शिक्षा हेतु जहाँ के देश के लगभग हर नगर में संगीत विद्यालय प्रारंभ हो चुके हैं, विश्वविद्यालयों में संगीत संकाय एवं विभाग कार्यरत् हैं वहाँ लगभग सभी प्रान्तों में, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में भी संगीत एक विषय की भाँति समाविष्ट किया जा चुका है।10"

"स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार ने शिक्षण में ललित कलाओं का महत्त्व पूर्णतः स्वीकार कर लिया और पाठ्यक्रमों में ललित कलाओं को सम्मिलित करने के लिए सरकार गंभीरता पूर्वक विचार करने लगी। परिणामतः 1952-53 में जब भारत के वर्तमान शिक्षा पहलुओं का अध्ययन करने हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर कमीशन) की नियुक्ति हुई तो आयोग ने अपने सर्वेक्षण में माध्यमिक विद्यालयों में अन्य विषयों के साथ संगीत विषय को सम्मिलित करने का सुझाव दिया। उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग ने मुदालियर कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर बहुमुखी शिक्षा प्रणाली को अपनाया और उसमें कला, विज्ञान व कॉमर्स के अंतर्गत पाठ्यक्रम का वर्गीकरण किया। संगीत को माध्यमिक शिक्षा में पूरी तरह से पाठ्यक्रम में ले लिया गया। माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव से संगीत विषय को भारत के अनेक राज्यों के विद्यालयों के पाठ्यक्रम में अन्य विषयों के साथ ऐच्छिक विषय के रूप में स्थान मिला, किन्तु एक सम्पूर्ण विषय की दृष्टि से शिक्षण में उसको वह महत्त्व नहीं मिला जो अन्य शैक्षिक विषयों का था। सरकार की ओर से सन् 1964-66 में शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) की नियुक्ति की गई। इसका उद्देश्य सभी स्तरों एवं पक्षों में शिक्षा विभाग के लिए सामान्य सिद्धान्त और नीतियों पर सरकार को सुझाव देना था। सरकार एवं शिक्षाविदों के प्रयोग से संगीत विषय को माध्यमिक विद्याालयों के पाठ्यक्रमों में महत्त्व प्राप्त हुआ। धीरे-धीरे संगीत विषय उच्चतर माध्यमिक, स्नातक व स्नात्कोत्तरीय कक्षाओं में पढ़ाया जाने लगा।11" संगीत शिक्षा का उद्देश्य वर्तमान विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा पद्धति निःसंदेह प्राचीन गुरुकुल पद्धति से भिन्न है, इसलिए आज की परिवर्तित परिस्थितियों में कार्य करते हुए अपेक्षाओं और आवश्यकताओं को परिवर्तित परिप्रेक्ष्य में ढालने की आवश्यकता है। अतः शिक्षा के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य को समझते हुए विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करके, उनके अनुरूप शिक्षण विधि का चयन करने तथा शिक्षा प्रदान करने से विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा को अधिक सफल, उपयोगी तथा उद्देश्य पूर्ण बनाया जा सकता है। संगीत शिक्षा मानसिक चेतना के माध्यम से समाज के विभिन्न असमानताओं को दूर करने का एक सशक्त माध्यम है। यद्यपि व्यक्तिगत् शिक्षण व्यवस्था में संगीत की विशेष शिक्षण पद्धति को रखा गया है, जिसके बहुत सार्थक परिणाम भी रहते हैं। तथापि आज के लोकतांत्रिक समाज में इस परम्परा का निर्वाह बहुत कठिन है। आज के परिवेश में व्यक्तिगत् शिक्षण अर्थात् गुरु-शिष्य परम्परा का महत्त्व होते हुए भी उसका व्यवहार करना संभव नहीं है। संगीत सर्वोत्कृष्ट कला है, जिसे प्राचीन ऋषि-मुनियों, संतों तथा भक्तों ने मोक्ष का साधन माना है। आज संगीत को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। अपना अस्तित्व बनाये रखने हेतु सामुहिक शिक्षा अन्य अनुकूल परिस्थितियों का सृजन करना आज के लिए अनिवार्य हो गया है। आज के विश्वविद्यालयीय संगीत शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य प्राचीन धारणाओं की रक्षा करते हुए नवीन धारणाओं को आवश्यक रूप से ग्रहण करना है। संगीत की शिक्षा का अर्थ केवल स्वर-ताल युक्त धुनों या रागों को सीखना मात्र नहीं है, वरन् सारगर्भित रूप में संगीत के साधना पक्ष में विद्यार्थी में श्रद्धा व आस्था उत्पन्न

करना, संगीत के प्रयोगों के प्रति विशाल दृष्टिकोण अपनाते हुए भी उसके लालित्य रस तत्वों के प्रति सचेत रहना तथा संगीत के उचित विकास के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना, वैज्ञानिक प्रगति के युग में वैज्ञानिक संयंत्रों का आश्रय लेते हुए संगीत के मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक विचारधारा को अपनाते हुए भी उसके सांस्कृतिक महत्त्व की उपेक्षा न करना आदि भी अत्यन्त आवश्यक है। विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य केवल एम.ए., पी-एच.डी. की डिग्री लेना ही नहीं है, वरन् संगीत का वास्तविक आनंद, उसकी गंभीरता से परिचित होना, व्यवसायिक रूप में उसे अपनाने की धारणा होते हुए उसके प्रति निष्ठावान् होना चाहिए। शिक्षा समाप्त होने पर उचित कार्य व आजीविका का प्रबंध प्रशासन की ओर से किया जाये। संगीत के विभिन्न प्रकारों के लिए अभिरुचि उत्पन्न करना, सौन्दर्य के आस्वादन की क्षमता का विकास करना, आस्वाद की पात्रता उत्पन्न करना, संगीत के किसी भी विषय पर विचार करने की क्षमता उत्पन्न करना, संगीत के सौन्दर्यात्मक व वैज्ञानिक तथा अन्य पक्षों की समझ उत्पन्न हो जाना तथा रागदारी संगीत के साथ-साथ संगीत के अन्य प्रकारों का भी पूर्ण ज्ञान आदि होना चाहिए। विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा आज सिर्फ़ एक औपचारिकता मात्र रह गई है। जिन शिक्षा बोर्डों में संगीत एक विषय के रूप में शामिल नहीं है, वहाँ संगीत शिक्षा का स्वरूप सिर्फ़ दैनिक प्रार्थनाओं, राष्ट्र-भक्ति गीतों एवं सांस्कृतिक आयोजनों की प्रस्तुतियों तक सीमित होता है। संगीत सिर्फ़ कुछ गीतों एवं कुछ नृत्य प्रस्तुतियों तक सीमित नहीं होना चाहिए, वरन् संगीत का स्वरूप, प्रकार, वर्गीकरण एवं विस्तार से परिचय कराना ही विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। विश्वविद्यालयीन शिक्षा में संगीत शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास के अतिरिक्त संगीत का ज्ञान, उसके शास्त्रीय एवं उपशास्त्रीय पक्ष में अंतर, आधुनिक संगीत का प्राचीन संगीत से तुलनात्मक अध्ययन, पाठ्य-पुस्तक या सहयोगी पुस्तक के माध्यम से संगीत का सामान्य ज्ञान, संगीत का आधार, वर्गीकरण एवं प्रकारों का परिचय, आधुनिक अविष्कारों का ज्ञान, संगीत का सम्पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक विकास में योगदान, संबंधी विषयों की जानकारी है। विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा की सफलता के लिए उस स्तर पर उद्देश्यों का स्पष्ट निर्धारण होना आवश्यक है। विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा सम्बन्धी निम्नलिखित कुछ उद्देश्य निर्धारित किए जा सकते हैं।

- संगीत शिक्षा का व्यापक उद्देश्य सौन्दर्यानुभूति तथा आनंदानुभूति है। इसलिए आनंदानुभूति का विकास विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का सर्वोपरि उद्देश्य होना चाहिए।
- विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का व्यापक रूप से उद्देश्य विद्यार्थियों में संगीत के सूझ-बूझ का विकास करना होना चाहिए, ताकि वे सुनकर, समझकर, स्वयं निर्णय लेने में समर्थ हो सकें क्योंकि तभी संगीत उनकी संवेगात्मक संतुष्टि का साधन बन सकता है। विश्वविद्यालयीन स्तर पर संगीत शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को संगीत सम्बन्धी निर्णयपरक् बनाना भी होना चाहिए।
- विद्यार्थियों की व्यक्तिगत् भिन्नताओं तथा संगीत की किसी शाखा विशेष में किसी विद्यार्थी की विशिष्ट प्रतिभा को पहचान कर उसे विकसित करने के लिए अवसर जुटाना विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।
- संगीत जीवन का एक अभिन्न अंग बने, यह विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। अतः विद्यार्थी जो भी संगीत की कक्षाओं में सीखे, कक्षा के बाहर उसकी उपयोगिता, उसके दैनिक जीवन में हो तथा भावी जीवन में संगीत शिक्षा आत्म-अभिव्यक्ति का साधन बने। संगीत की सफलता की कसौटी यही है।
- कल्पना शक्ति तथा सृजनात्मक शक्ति का विकास विश्वविद्यालयीन स्तर पर किया जाना चाहिए।
- विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा के अन्तर्गत शास्त्र तथा क्रियात्मक दोनों पक्षों का विस्तृत अध्ययन किया जाना चाहिए।

उपसंहार

विश्वविद्यालयीन संगीत शिक्षा के उद्देश्य स्पष्टः नहीं हैं। लक्ष्य तथा उद्देश्य संगीत शिक्षा को दिशा प्रदान करते हैं। उद्देश्यों का स्पष्ट ज्ञान शिक्षकों तथा विद्यार्थियों को सही निर्देशन प्रदान करता है। अतः शिक्षा में उद्देश्य निर्धारण किये जाने की अहम् भूमिका है। विश्वविद्यालयीन संगीत की शिक्षा में उद्देश्यों का स्पष्ट निर्धारण न किए जाने के संदर्भ में अनेक शिक्षकों, कलाकारों ने संकेत किया है। विश्वविद्यालयों में संगीत की शिक्षा दिये जाने का आज कोई स्पष्ट उद्देश्य नहीं दिखाई पड़ रहा। संगीत शिक्षा के लक्ष्य और विभिन्न क्षेत्रों का अभी तक निर्धारण न होने से न तो

उपयुक्त शिक्षा पद्धति की आवश्यकता ही गम्भीरता से महसूस की गई है और न ही शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए कोई व्यवस्था या प्रावधान हो सका है। विश्वविद्यालयों में संगीत की शिक्षा को सफल बनाने के लिए उस पर पुनः विचार करके उद्देश्यों का निर्धारण किए जाने की आज नितान्त आवश्यकता जान पड़ती है। वर्तमान कार्यगत् परिस्थितियों में संगीत शिक्षा का उद्देश्य केवल कलाकार बनाना ही नहीं हो सकता बल्कि संगीत शिक्षक, शास्त्रकार, समालोचक, रचनाकार एवं संगीत शिक्षा को रोजगारोन्मुखी आदि बनाने की दिशा में विचार करके उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से पुनर्निर्धारण किए जाने की तथा उसके लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम बनाने व शिक्षण-विधि का चयन करने की आवश्यकता आज सर्वसम्मति से अनुभव की जा रही है।

संदर्भ

1 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1957). भारतीय संगीत का इतिहास. मानसरोवर प्रकाशन महल, फीरोजाबाद (उ.प्र.).
2 चैब, ए.सी. .(1988). संगीत की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली. कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर.
3 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1969). भारतीय संगीत का इतिहास. चैखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
4 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1969). भारतीय संगीत का इतिहास. चैखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
5 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1969). भारतीय संगीत का इतिहास. चैखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
6 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1969). भारतीय संगीत का इतिहास. चैखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
7 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1969). भारतीय संगीत का इतिहास. चैखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
8 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1957). भारतीय संगीत का इतिहास. मानसरोवर प्रकाशन महल, फीरोजाबाद (उ.प्र.).
9 परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर. (1957). भारतीय संगीत का इतिहास. मानसरोवर प्रकाशन महल, फीरोजाबाद (उ.प्र.).
10 चैब, ए.सी. .(1988). संगीत की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली. कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर.
11 चैब, ए.सी. .(1988). संगीत की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली. कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर.
12 चैब, ए.सी. .(1988). संगीत की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली. कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर.
13 सक्सेना, गुजंन. (1999). सितार की संस्थागत् शिक्षण प्रणाली (शोध-प्रबंध)